International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 165-166

गुरू जांभोजी के पर्यावरण चिंतन की प्रासंगिकता

डॉ० दर्शन पाण्डेय

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शिवाजी कॉलेज, दिल्ली विश्व विद्यालयय, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

प्रकृति वह शक्ति है जिसने धरती के समस्त प्राणियों की आवश्यकताओं का भार वहन किया हुआ है। इस पृथ्वी पर मनुष्य के जन्म से पहले ही उसके मूल-भूत वस्तुओं का नियोजन प्रकृति ने किया, लेकिन जैसे-जैसे मानव विकास करता गया प्रकृति का दोहन भी बढ़ता चला गया। यद्यपि प्राचीन सभ्यताओं के उद्भव से ही प्रकृति के महत्व को समझ कर मनुष्य स्वयं को प्रकृति एवं वातावरण के अनुसार ढालता चला गया। किन्तु वर्तमान आधुनिक सभ्यता के युग में मनुष्य ने जहाँ बहुविध एवं चतुर्दिक वैज्ञानिक विकास किया तथा अपनी सुख सुविधाओं के तमाम साधन एकत्रित किए, वहीं उसने प्रकृति के साथ ज़बरदस्त खिलवाड़ भी किया, उसने भौतिक सुख-सुविधाओं के संग्रहण में प्रकृति का सारा संतुलन बिगाड़ कर रख दिया है। इसी का परिणाम है कि मनुष्य जीवन का आधार वायु तथा जल का प्राकृतिक संतुलन आज काफी हद तक बिगड़ चुका है, आज पूरा विश्व अनेकानेक ख़तरे की चपेट में आ चुका है। 'ग्लोबल वार्मिंग' और लगातार बदलते मौसम की मार विश्व की चिंता का मुख्य विषय बना हुआ है। वास्तव में इसके लिए जिम्मेदार भी केवल मनुष्य ही है, जिसने धरती के हरे-भरे वृक्षों एवं जंगलों को काटकर उसके स्थान पर बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी कर दी हैं। उसने धरती को एक कंक्रीट के जंगल में परिवर्तित कर दिया है। चारों ओर गंदगी एवं प्रदूषण ने पर्यावरण की समस्या को और अधिक विकराल रूप प्रदान किया है।

यद्यपि वैदिक काल से ही भारत में पर्यावरण एवं प्रकृति संरक्षण को लेकर ऋषियों-मुनियों के प्रयास सराहनीय रहे हैं, जिन्होंने प्रकृति की रक्षा को धार्मिक मान्यताओं से जोड़ते हुए इसके संरक्षण का कार्य किया। पेड़ों की सुरक्षा हो इसके लिए यह ज़रूरी था कि उन्हें कटने से बचाया जाये। पीपल, नीम, बरगद आदि अनेक वृक्ष जो दिन-रात वायु को शुद्ध करते हैं, साँस लेने के लिए ऑक्सीज़न प्रदान करते हैं, ऐसे वृक्षों को धार्मिक मान्यताओं एवं आस्थाओं से जोड़ना एक दूरदृष्टि का काम था। पर्यावरण को लेकर ऐसी ही दूरदर्शिता एवं चिंता मध्यकालीन संत श्री जाम्भो जी में देखी जा सकती है। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से मध्यकाल में उत्पन्न श्री जाम्भो जी के विचार वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय और प्रासंगिक हैं।

मध्यकालीन संत जांभोजी के प्रकृति एवं पर्यावरण संबंधी विचार उतने ही प्रासंगिक हैं जितने तत्कालीन युग में थे। गुरू जांभोजी का उदभव उस समय हुआ जब भारत में अराजकता की स्थिति थी। समाज, राजनीति और धार्मिक आदि क्षेत्रों में अत्याचार और आडंबरों से बुरा हाल था। धर्म और भक्ति को लेकर ऐसे आडंबर फैले हुए थे जिनसे मासूम जनता त्रस्त थी। राजनीति के क्षेत्र में अव्यवस्था होने के कारण उस समय के भयंकर अकाल, अतिवृष्टि, अनावृष्टि जैसी परिस्थितियों में जनता की समस्याओं को सुनने वाला कोई नहीं था। ऐसी स्थिति में गुरु जांभोजी का जन्म हुआ, उन्होंने संवत 1542 में उन्तीस नियमों की आचार संहिता देकर 'बिश्नोई पंथ' की स्थापना की। इन 29 नियमों ने समाज को सहज जीवन यापन में न केवल मदद की, अपितु मनुष्य की मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त किया। वास्तव में जाम्भो जी द्वारा निर्धारित ये नियम सार्वकालिक, सार्वभौमिक और शाश्वत माने जा सकते हैं। यह भटके हुए मनुष्य को राह दिखाने वाले हैं, यदि वर्तमान आधुनिक युग में मनुष्य इन नियमों का पालन करे तो निश्चय ही वह खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकता है।

सहज जीवन प्रेमी जाम्भो जी भौतिक सुविधाओं से विरत दूर प्रकृति की गोद में रहना प्रिय था, उन्होंने प्रकृति के साथ-साथ वन-संस्कृति को बी बचाने का कार्य किया। आज वनवासी संस्कृति तथा भोग विलासी भौतिक या शहरी संस्कृति की टकराहट देखने को मिलती है। जाम्भो जी का जीवन वन-संस्कृति के साथ बहुत गहरे रूप से जुड़ा हुआ था। दूरदृष्टि सम्पन्न एवं दिव्य व्यक्तित्व संत गुरू जांभोजी वस्तुतः आज के पर्यावरण संकट तथा उससे जुड़े आधुनिक युग की विकट समस्याओं को शायद अपने युग में ही महसूस कर चुके थे। यही कारण था कि वे ताउम्र तत्कालीन समाज को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक करते रहे। हालांकि उनकी वाणियों में लिखित रूप में पर्यावरण संरक्षण पर बहुत अधिक नहीं मिलता, वस्तुतः उनके बनाये 29 नियमों में ही कुछ नियम ऐसे हैं जो पूर्णतया प्रकृति एवं पर्यावरण की रक्षा हेतु कहे जा सकते हैं। इन्हें समझकर हम उनके पर्यावरण संबंधी चिंतन को जान सकते है।

गुरू जाम्भो जी के 29 नियमों में पर्यावरण चिंतन से जुड़ा एक महत्वपूर्ण नियम है- यज्ञ करना। उन्होंने प्रतिदिन प्रातः एवं सायंकाल को यज्ञ करना आवश्यक बताया है, उनका मानना है कि "नित्य हवन से हम पर्यावरण को शुद्ध रखकर प्राणी मात्र का भला कर सकते हैं। होम की अग्नि से वातावरण में फैले हुए विभिन्न रोगों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं और हमारे आसपास का सारा वातावरण सुगंधित हो जाता है। इस तरह नित्य का हवन आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।"(१)

पानी, वाणी, ईंधन एवं दूध को छानकर प्रयोग करना

गुरूजी के 29 नियमों में यह नियम अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो आज भी अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है। जल और दूध को तो छानकर ही पीना चाहिए, जबकि लकड़ी, कंडे आदि को झाड़ पर चढ़ाना चाहिए, वे कहते हैं-

'पानी, वाणी, ईंधणी दूध ज लीजे छाण'

यह नियम देखने में जितना सरल है उसका महत्व उतना ही अधिक है, क्योंकि बिना छाने पानी पीने से अनेक प्रकार की बीमारियाँ हो जाती हैं। इसके पीछे एक तर्क यह भी है कि पानी को प्रदूषित होने से बचाना है, क्योंकि प्रदूषित पानी सेहत के लिए बहुत हानिकारक हो सकता है। मनुष्य को बीमार होने से बचाने तथा शुद्ध पानी के संरक्षण की बात गुरूजी के इस कथन से स्पष्ट होती है। इसी प्रकार दूध को भी छानकर ही पीना चाहिए, अंजाने में दूध में कोई ऐसा तत्व न चला गया हो जो स्वास्थ्य के लिए अहितकर हो सकता हो। जबकि जलाने से पूर्व ईंधन को अच्छी प्रकार से झाड़ने से उसमें मौजूद निर्दोष जीव के प्राणों की रक्षा होती है, साथ ही जीव के जलने से वातावरण भी प्रदूषित होता है। एक स्थान पर गुरू जाम्भो जी कहते हैं-

हत्या करो परजीव की, वन में अगन लगाय।
तीन जन्म दुःख देख कै, चौथे दोजक जाय।।

यह बात तो सर्वविदित है कि जब बिना विचार किए बोला जाता है तो पछताना भी पड़ता है, ऐसे में वाणी का संयमित रूप से प्रयोग गुरूजी उचित मानते थे। जाम्भो जी ने जिस प्रकार पानी या दूध को छानकर पीने की बात कही है, उसी प्रकार वाणी पर

संयम रखने की बात कही है। वे स्वयं बहुत कम बोलते थे, किन्तु जो कुछ भी कहते थे बहुत ही सटीक और सधी बात ही उनके मुख से निकलती थी, यह उनके व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण विशेषता कही जा सकती है।
गुरू जी ने क्षमा को बहुत महत्व दिया है, उन्होंने कहा है –

'दया हिरदे घरो, गुरु बताओ जाण'

क्षमा, नम्रता का ही दूसरा रूप है, दयावान व्यक्ति के हृदय में ही क्षमा का भाव होता है।'(२) जिसके हृदय में क्षमा नहीं, दया नहीं वह प्रकृति की मानवीयता के मूल मंत्र को नहीं समझ सकता है, क्योंकि प्रकृति सदैव ही परोपकार करती है। फलों से लदे वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते और सरोवर अपना जल स्वयं नहीं पीता। वृक्ष का फल एवं सरोवर का जल दूसरों के लिए ही होता है। यही भावना मनुष्य के अंदर होनी चाहिए तभी वह प्रकृति की रक्षा कर सकता है। जीवों पर दया करने की बात पर गुरू जी कहते हैं- *'जीव दया पालणी, रूंख लीला नहीं घावै'* जिस प्रकार मनुष्य को अपने प्राण प्रिय होते हैं, उसी प्रकार पशु-पक्षी सभी को अपने प्राण प्रिय होते हैं। जाम्भो जी ने कहा है कि 'अपने से कमजोर प्राणियों की रक्षा करनी चाहिए। इस भाव से मनुष्य अनोखे सुख का अनुभव करता है, दया की भावना के बिना मनुष्य निष्ठुर और कठोर बन जाता है। इस नियम की सार्थकता आज भी उतनी ही है जितनी उस युग में थी।'(३) भौतिक सुखों का आकांक्षी तथा स्वार्थ से परिपूर्ण आधुनिक युग में मनुष्य क्षमा, दया और नम्रता जैसे गुणों को भूल चुका है। मनुष्य अपने क्षुद्र लाभ के लिए ही वन तथा वन्य प्राणियों को नुकसान पहुंचाता है, उसके भीतर जब राक्षसी एवं तामसिक वृत्ति जागृत हो जाती है तब वह हिंसक पशु समान हो जाता है। गुरू जी का मानना था कि अन्य प्राणियों को मारकर उनका भक्षण करना मनुष्यता का परिचायक नहीं।
आज मनुष्य अपने भौतिक एवं आर्थिक लाभ हेतु लगातार प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ने का कार्य कर रहा है। वह जिस प्रकार से वन्य प्राणियों का शिकार और जंगलों को निरंतर काटता जा रहा है, उससे धरती का प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता जा रहा है। आज जब सरकारें और पर्यावरणविद कभी हिरणों को बचाने की बात करते हैं तो कभी टाइगर बचाने के लिए 'Save Tiger' का नारा लगाते हैं। अनेक ऐसे पशु-पक्षी हैं जो विलुप्ति की ओर हैं, इसी कारण सरकारें ऐसे वन्य जीवों के शिकार पर पूर्ण पाबंदी लगा रखी है। वास्तव में इनके पीछे केवल यही तथ्य है कि इन वन्य प्राणियों की संख्या लगातार कम होती जा रही है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब ये वन्य प्राणी केवल तस्वीरों तक ही सीमित रह जाएंगे। यह एक तथ्य है कि धरती से अनेकानेक जीव धीरे-धीरे विलुप्त होते चले गए, जिनके केवल कल्पना-चित्र ही अब देखे जाते हैं। यही बात गुरू जाम्भोजी ने भी कही थी, वह आज भी उतनी ही सार्थक और प्रासंगिक दिखाई देती है।
गुरू जांभोजी के अनुसार एक नियम है- हरा वृक्ष ना काटें। वर्तमान संदर्भों में पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण है- वृक्षों की अंधाधुंध कटाई। वृक्षारोपण के अभाव तथा पेड़ों की अंधाधुंध कटाई से मानव जाति पर अस्तित्व का संकट मँडराने लगा है। जंगलों में आग लगने से न केवल पेड़ खत्म होते हैं बल्कि वायु प्रदूषण भी होता है। धरती का जल स्तर भी तेजी से घट रहा है, ग्लेशियर भी तेजी से पिघल रहे हैं, जिससे विश्व की कई नदियों में बार-बार बाढ़ आने से मानव-जीवन ख़तरे में आ गया है। कुछ वर्ष पूर्व उत्तराखंड राज्य में भयंकर रूप से जो जल-प्लावन हुआ, जिसमें हजारों लोग असमय ही काल कवलित हो गए। कितने ही गाँव बह गए। अनगिनत पशु मारे गए। यह सब आखिर क्यों? आखिर इन सब का जिम्मेदार कौन? इसका सीधा सा उत्तर है- आज के मनुष्य की महत्वाकांक्षा। मनुष्य ने अपनी अंध-आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हरे-भरे पेड़ों का अंधाधुंध नाश किया है। हम यह भूल गए कि जीवन जीने के लिए शुद्ध हवा और पानी की भी ज़रूरत है। शायद मनुष्य ने केवल यह सोचा कि वन या जंगल पशु-पक्षियों का बसेरा मात्र है। हमने उन हरे-भरे जंगलों की जगह कंक्रीट के जंगल उगा दिये। अब यहाँ पक्षियों का कलरव नहीं, वाहनों का शोर है। पेड़ों की शीतल छाया नहीं, बिल्डिंगों में लगे बड़े-बड़े एयर-कंडीशनर से बाहर की ओर निकलने वाली झुलसाती हवा और आसमान से आग उगलता सूरज दिखाई देता है। ऐसे में न ही मानसून में बादल बरसते हैं और न ही शुद्ध एवं ताज़ी हवा कि बयार चलती है। निरंतर पेड़ों की कटाई का नतीज़ा है- ग्लोबल वार्मिंग। जिसके कारण ओज़ोन परत में छिद्र होने से सूर्य से निकलने वाली हानिकारक पराबैंगनी किरणें सीधे धरती पर आने से आज कैंसर जैसी तमाम बीमारियों का संकट उत्पन्न हो रहा है। मनुष्य-जाति के अस्तित्व पर मँडराते इस संकट का केवल एक ही उपाय है- वनों एवं वृक्षों की रक्षा तथा वृक्षारोपण।
गुरू जांभोजी ने मनुष्य को यह तथ्य समझाने का प्रयास किया कि मानव और वृक्ष का आपस में अभिनव रिश्ता है। मानव जन्म से लेकर मृत्यु तक वृक्षों पर ही आश्रित है, इसलिए उन्होंने मनुष्य को वृक्ष से प्रेम करने की शिक्षा दी और स्थान-स्थान पर भ्रमण करते हुए इसी भावना का प्रचार-प्रसार किया। गुरू जांभोजी के वृक्ष-प्रेम की भावना का उनके मतावलंबियों पर गहरा प्रभाव पड़ा, वे न तो हरा वृक्ष काटते थे और न ही किसी को काटने देते थे। संवत 1787 में हुए खेजडड़ी बलिदान अविस्मरणीय घटना है। जोधपुर से 25 किलोमीटर दूर खेजडली गांव में वृक्षों की रक्षा करते हुए 363 स्त्री-पुरुषों ने अपने प्राणों का बलिदान दे दिया। संभवतः इसी की प्रेरणा स्वरूप आधुनिक युग में पेड़ों की रक्षा के लिए 'चिपको आंदोलन' भी हुआ। वस्तुतः आज पर्यावरण की रक्षा करने के लिए इसी संवेदना की आवश्यकता है। पर्यावरण संरक्षक गुरू जांभोजी ने पर्यावरण संरक्षण के लिए जो उपाय बताए हैं, उन सभी का पालन करें तो वर्तमान में पर्यावरण संबंधी सभी समस्याओं से बचा जा सकता है।
गुरू जांभोजी ने हरे वृक्ष को काटना जीव हत्या के समान बताया है, पर्यावरण की रक्षा के लिए मनुष्य और अन्य प्राणियों के संतुलन बनाए रखने के लिए गुरू जी ने वृक्ष ना काटने का नियम बनाया था, उनका मानना था कि "वृक्ष प्राणवान हैं, इसलिए जीव दया की भावना के कारण अन्य प्राणियों की रक्षा की तरह वृक्षों की भी रक्षा करना आवश्यक है। इन्हीं सब कारणों के आधार पर गुरू जांभोजी ने हरे वृक्ष न काटने की आज्ञा दी।"(४) धरती को जल से सराबोर करने वाली वर्षा का आधार वृक्ष ही होते हैं, मरु-भूमि में वर्षा इसीलिए नहीं होती क्योंकि वहाँ वृक्ष नहीं होते। वहीं मृदा संरक्षण के लिए भी पेड़ ज़रूरी हैं, उपजाऊ भूमि के कटाव को रोकने के लिए पेड़ ही सहायक होते हैं। गुरू जांभोजी ने पर्यावरण की रक्षा हेतु लोगों को वृक्ष लगाने के लिए और वृक्षों से प्रेम करने की भावना को प्रेरित किया। गुरू जी का यह नियम आज की पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। आज लोगों को अधिक से अधिक वृक्ष लगाने और उनसे प्रेम करने की आवश्यकता है। अतः हमें आज मनुष्य के अस्तित्व पर आए संकट को दूर करने के लिए वनों की रक्षा तथा वन्य प्राणियों की सुरक्षा करने का दृढ़-संकल्प लेना होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. बिश्नोई पंथ और साहित्य-पृष्ठ- 21
2. गुरू जांभोजी का जीवन दर्शन, पृष्ठ-56
3. वही, पृष्ठ 257
4. बिश्नोई पंथ और साहित्य, पृष्ठ-24
5. जम्भसागर –टीकाकार- कृष्णानंद आचार्य, जांभाणी साहित्य अकादमी